बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 193

आशावादी नजरिया

यदि आशावादी दृष्टिकोण से देखें और वैश्विक भूराजनीति को प्रभावित करने वाले राष्ट्र के रूप में भारत के कद की बात करें तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हालिया अमेरिका यात्रा को सफल करार दिया जा सकता है।

ह्यूस्टन शहर में 50,000 उत्साही प्रतिभागियों के समक्ष रैली में मोदी के साथ अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप की उपस्थिति के बाद अमेरिकी राजनीतिक प्रतिष्ठान के समक्ष भारत और भारतीय-अमेरिकियों की महत्ता के बारे में कुछ भी छिपा नहीं रह गया है। इस रैली का प्रसारण 30 लाख भारतीय अमेरिकियों तक पहुंचा। प्रधानमंत्री की यात्रा के ऐन पहले कॉर्पोरेशन कर में कटौती के बाद निवेशकों और कारोबारियों तक प्रधानमंत्री की बात भी ज्यादा प्रभावी ढंग से पहुंची होगी।

बहरहाल प्रधानमंत्री की यात्रा के पहले देश में जिस तरह की अपेक्षाएं पैदा हुई थीं, उन्हें देखते हुए कहीं न कहीं कमी रह गई। सबसे अहम बात यह है कि दोनों देशों के बीच चले आ रहे कारोबारी तनाव में कोई प्रगति देखने को नहीं मिली। चीन व्यापारिक तंत्र को जिस तरह का बड़ा नुकसान पहुंचाने की क्षमता रखता है, उसे देखते हुए कम से कम भारत और अमेरिका ऐसी लड़ाई को टाल सकते थे। चीन की गतिविधियां भारत और अमेरिका को एक समान नुकसान पहुंचा रही हैं। माना जा रहा था कि प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति ट्रंप के बीच छोटी मोटी व्यापारिक संधि हो सकती है और दोनों देशों के व्यापारिक प्रतिष्ठानों की टकराहट समाप्त हो सकती है। हाल के दिनों अमेरिका द्वारा भारतीय निर्यातकों की शून्य टैरिफ कार्यक्रम की अर्हता समाप्त करने और भारत द्वारा इलेक्ट्रॉनिक्स और चिकित्सा उपकरण क्षेत्रों में संरक्षणवादी रुख अपनाने से दोनों देशों के बीच तनाव बढ़ा है। यकीनन ऐसा समझौता हो सकता है जिससे दोनों देशों को फायदा हो। बहरहाल, खेद की बात है कि इस दिशा में कोई प्रगति नहीं हो रही। यहां तक कि मोदी की यात्रा का रुख तय करने वाला माना जा रहा एलएनजी पेट्रोनेट और अमेरिकी कंपनी का समझौता भी दूसरे दिन आशंकाओं के घेरे में आ गया जब भारतीय शेयर बाजार इस सौदे को लेकर कुछ कड़े सवाल कर बैठे। बाद में पता चला कि यह समझौता नहीं बल्कि केवल एक और समझौता ज्ञापन था। दोनों देशों के व्यापारिक रिश्तों में सुधार की दृष्टि से ऊर्जा क्षेत्र का यह सहयोग उतना प्रभावी नहीं रहा जितनी अपेक्षा थी।

खेद की बात यह भी है कि आर्थिक रिश्तों को नए सिरे से तय करने के बजाय ढेर सारी ऊर्जा जम्मू कश्मीर (अब पूर्व) के बदले हुए राजनीतिक दर्जे के अंतरराष्ट्रीय असर पर खर्च कर दी गई। हालांकि यह हमारा आंतरिक मामला है लेकिन यह आशा करना व्यर्थ है कि ट्रंप या किसी भी अन्य नेता के नेतृत्व वाला अमेरिका इस मुद्दे की पूरी तरह अनदेखी करेगा या पाकिस्तान को पूरी तरह अलग-थलग करेगा। भले ही पाकिस्तान कितनी भी आक्रामकता दिखाए।

ह्यूस्टन की रैली में शामिल होने के बाद ट्रंप प्रेस के साथ मुलाकात में लगातार पाकिस्तान के क्षेत्रीय आतंकवाद का गढ़ होने से जुड़े सवालों से बचते रहे। यह भी भारत के लिए दिक्कत की बात है। प्रधानमंत्री ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में जो भाषण दिया उसमें उन्होंने जलवायु परिवर्तन के संकट से लड़ाई समेत तमाम व्यापक चिंताओं पर भारत की प्रतिबद्धता की बात की। आशावादी दृष्टिकोण से इस यात्रा को खारिज नहीं किया जा सकता और इसने घरेलू तौर पर प्रधानमंत्री की वैश्विक नेता की छवि को मजबूत ही किया है। परंतु सच तो यह है कि अपनी इस यात्रा के दौरान वह भारत के लिए गिनेचुने ठोस लाभ ही हासिल कर पाए।

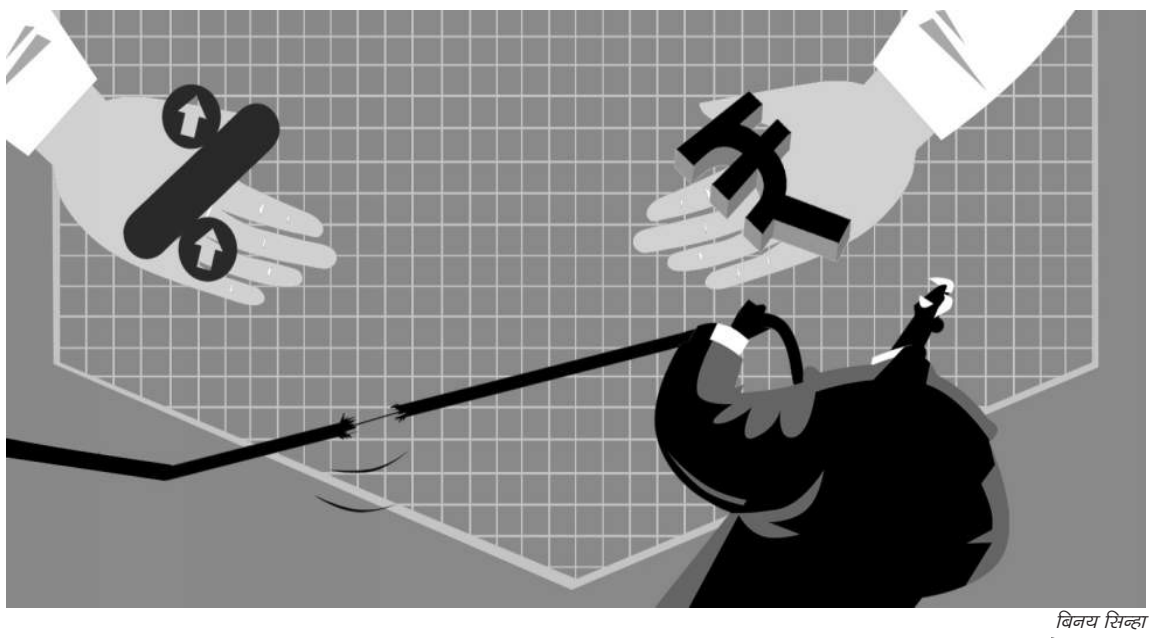

बिनय सिन्हा

आर्थिक झंझावात के दौर में कारगर रणनीति

लोगों का ध्यान आकृष्ट करने वाले नारों के बजाय सरकार को आठ फीसदी की वास्तविक वृद्धि दर को अपना लक्ष्य बनाने की जरूरत है। बता रहे हैं जैमिनी भगवती

वित्त वर्ष 2019-20 की पहली तिमाही में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की पांच फीसदी वृद्धि दर को देखकर केंद्र सरकार की त्योरियां चढ़ जानी चाहिए थीं। वर्ष 2014 में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की अगुआई वाली केंद्र सरकार को गैर-निष्पादित आस्तियों (एनपीए) के बोझ से दबे सार्वजनिक बैंक विरासत में मिले थे। सकारात्मक बात यह थी कि तेल के अंतरराष्ट्रीय भाव अपेक्षाकृत निचले स्तर पर रहे हैं और घरेलू महंगाई भी पिछले कुछ वर्षों से काबू में रही है। सरकार के कट्टर समर्थक व्हाट्सऐप पर बिन मांगे संदेश भेजकर आर्थिक सुस्ती की व्याख्या में जुटे हुए हैं। उनका दावा है कि भारत की पांच फीसदी की वृद्धि भी विकसित देशों की वृद्धि से अधिक है। जी-7 देशों के साथ ऐसी तुलना अप्रासंगिक है क्योंकि अधिकतर भारतीयों को अभी तक सामाजिक, स्वास्थ्य एवं रोजगार संबंधी वे लाभ नहीं मिल पाए हैं जो विकसित देशों के नागरिकों को अमूमन मिलते हैं।

कड़वा सच यह है कि भारत में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की मांग धराशायी हो चुकी है। इसके कई कारणों में से एक को मैं तिहरी बहीखाते की समस्या कहूंगा। दोहरे बहीखाते की समस्या निजी क्षेत्र के बड़े कर्जदारों और कर्जदाताओं को प्रभावित कर रही थी जिसकी वजह 2008-12 के दौरान गैरजिम्मेदाराना ढंग से बांटे गए बड़े कर्ज थे। तीसरा बहीखाता उन लोगों से संबंधित है जो अपने क्रेडिट एवं डेबिट कार्ड के जरिये मासिक किस्त पर कार, स्कूटर, उपभोक्ता उत्पाद एवं सेवा लेते हैं। इनमें से बहुत लोग नोटबंदी के कारण आय को लगे तगड़े झटके और जीएसटी रिफंड की सुस्त दर के चलते अपने ईएमआई का भुगतान बढ़ाना नहीं चाहते हैं।

भारतीय उत्पादों की विदेश में मांग कम होने के पीछे एक अहम कारण रुपये का खासा अधिमूल्यन होना भी है। भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के गवर्नर ने गत 19 सितंबर को अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) की जुलाई 2019 रिपोर्ट का जिक्र करते हुए कहा कि रुपये की वास्तविक प्रभावी विनिमय दर (रीअर) इसके सही मूल्य के करीब है। खुद आरबीआई ने भी जुलाई रिपोर्ट में कहा है कि रुपये की रीअर दर छह मुद्राओं के समूह की तुलना में 24.6 फीसदी ज्यादा है। ऐसे में यह अजीब है कि आरबीआई गवर्नर ने रुपये की दर के बारे में आईएमएफ रिपोर्ट का जिक्र करना पसंद किया।

भारतीय बैंकों और गैर-बैंकिंग वित्त कंपनियों (एनबीएफसी) के अधिक कर्ज बांटने से घरेलू मांग बढ़ाने में मदद मिलती। लेकिन भारतीय वित्तीय संस्थान कर्ज बांटने को लेकर हिचक रहे हैं।

कर्जदाताओं के चौकन्ना होने की वजह यह है कि चूककर्ता लेनदार उधारी के समय जमानत पर दी गई संपत्ति को अपने पास बनाए रखने में सफल हो जा रहे हैं जबकि दूसरी कंपनियां उस संपत्ति के लिए पारदर्शी ढंग से बोली भी लगा रही हैं।

आरबीआई के 12 फरवरी, 2018 के परिपत्र में यह प्रावधान था कि कर्जदाताओं को भुगतान में चूक चिह्नित होने के साथ ही उसे दिवालिया प्रक्रिया में लाना होगा और कर्जदारों को मामला राष्ट्रीय कंपनी कानून अधिकरण (एनसीएलटी) में भेजने के पहले 180 दिनों के भीतर मामला निपटाने का वक्त मिलता था। ऐसे में कर्जदारों के लिए यह जरूरी था कि वे भुगतान में चूक होने के पहले ही वित्तीय संस्थानों से संपर्क कर समय बढ़ाने या अन्य स्रोतों से अंतरिम ऋण लेने के प्रयास करें। इस परिप्रेक्ष्य में 12 फरवरी का परिपत्र उच्चतम न्यायालय द्वारा 2 अप्रैल, 2019 को निरस्त करना एक भयंकर भूल थी। आरबीआई और सरकार दोनों को ही इस परिपत्र के पक्ष में सम्मिलित रूप से दलील रखनी चाहिए थी। उद्दंड कर्जदारों के समर्थकों का कहना है कि उन्हें अपनी परिसंपत्ति बनाए रखने की इजाजत और सेहत दुरुस्त करने के लिए कर्जदाताओं से मदद भी दी जानी चाहिए। सीमित देनदारी विधान प्रवर्तकों को निजी संपत्ति अपने पास रखने की अनुमति देता है और गिरवी रखी गई संपत्ति को ही जब्त किया जा सकता है।

ऐसा लगता है कि सरकार ने सार्वजनिक बैंकों से बेहद संयम बरतने की उम्मीद फिर से लगा ली है। इन बैंकों पर अक्सर बड़े कर्जदारों के साथ मिलीभगत के आरोप लगते रहे हैं। बैंक बोर्ड ब्यूरो (बीबीबी) ने सार्वजनिक बैंकों के बोर्ड में अपने क्षेत्र की गहरी जानकारी रखने वाले और असंदिग्ध निष्ठा वाले लोगों को सदस्य नियुक्त किए जाने की सिफारिश की थी। इसके अलावा एनसीएलटी के पास लंबित मामलों के त्वरित निपटान की भी जरूरत है। इस स्तर पर यही लगता है कि ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता (आईबीसी) और भारतीय ऋणशोधन एवं दिवालिया बोर्ड शायद उसी तरह अप्रासंगिक हो गया है जैसे सरफेसी अधिनियम 2002 और ऋण वसूली अधिकरण हो गए थे।

सरकार एलआईसी और कोल इंडिया में अपनी हिस्सेदारी को 60 फीसदी पर लाकर बाहरी एवं घरेलू स्रोतों से संसाधन जुटा सकती है। एयर इंडिया, एमटीएनएल और बीएसएनएल में संसाधन नष्ट होते जा रहे हैं और यह समय सरकार के लिए इन कंपनियों में अपनी हिस्सेदारी घटाने और विदेशी निवेश जुटाने के लिए एकदम माकूल है। अगर केवल घरेलू स्रोतों से ही फंड जुटाए जाते हैं तो वित्तीय समर्थन दूसरे स्थानीय निवेशों से खींचा भी जा सकता है।

सरकार ने गत 20 सितंबर को कॉर्पोरेट कर में बड़ी कटौती की घोषणा की। यह कदम मांग में तेजी ला सकता है लेकिन शर्त यही है कि कंपनियां अपनी आय में वृद्धि का लाभ कर्मचारियों को देने और कीमतें कम करने में लगाएं। समय के साथ घरेलू एवं विदेशी निवेश बढ़ सकता है लेकिन उसके लिए कर दरों का निवेश विकल्पों की तुलना में प्रतिस्पर्द्धी रहना जरूरी है। लेकिन इस कदम का नकारात्मक पहलू यह है कि सरकार को इसी वित्त वर्ष में 1.4 लाख करोड़ रुपये की राजस्व क्षति होने और उसकी वजह से राजकोषीय घाटे को चार फीसदी तक पहुंच जाने की आशंका है। जीएसटी परिषद ने कारोबारी धारणा की बहाली के लिए कई कदम उठाएं हैं जिनमें से होटल कमरों पर जीएसटी कम करने का पर्यटन व्यवसाय पर अनुकूल असर पड़ सकता है।

वित्त वर्ष के पहले चार महीनों में ही भारतीय अर्थव्यवस्था से 5.8 अरब डॉलर रकम उदार धनप्रेषण योजना (एलआरएस) के तहत बाहर चली गई जबकि 2014-19 के दौरान इस तरह कुल 45 अरब डॉलर बाहर भेजे गए। इसकी तुलना में 2009-14 की अवधि में केवल 5.5 अरब डॉलर ही भेजे गए थे। इसके उलट भारत आने वाला प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 2018 में 42 अरब डॉलर रहा। इसके बावजूद एलआरएस के तहत बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा का बाहर जाना चिंता का विषय है।

निष्कर्षत: सरकार ने वर्ष 2024 तक अर्थव्यवस्था को पांच लाख करोड़ डॉलर पहुंचाने का जिस तरह माहौल बनाया है वह भारतीय उत्पादों एवं सेवाओं के लिए घरेलू एवं विदेशी मांग बढ़ाने की फौरी जरूरत से ध्यान बंटाने का काम करता है। कुछ महीनों पहले वित्त मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी ने यह सुझाव देकर अपनी नासमझी दिखाई थी कि अगर भारतीय रुपये का भाव बढ़ता है तो पांच लाख करोड़ डॉलर अर्थव्यवस्था के लक्ष्य को आसानी से हासिल किया जा सकता है। लोगों का ध्यान खींचने वाले नारों से दूर रहकर सरकार को रुपये के संदर्भ में आठ फीसदी की वास्तविक वृद्धि दर हासिल करने के प्रयास करने चाहिए। इससे रोजगार बढ़ाने और गरीबी कम करने में मदद मिलेगी।

(लेखक पूर्व राजदूत और विश्व बैंक के विशेषज्ञ सदस्य हैं)

नियामकों द्वारा कानून का उल्लंघन और कारोबारी सुगमता का मसला

बाअदब

सोमशेखर सुंदरेशन

प्रतिभूति अपील पंचाट ने कहा है कि अधिग्रहण नियमों के अधीन किसी अवयस्क को खुली पेशकश नहीं करने के लिए जवाबदेह नहीं ठहराया जा सकता। प्रतिभूति बाजार में यह अवयस्क न्याय से जुड़ा इकलौता मामला नहीं है। पंचाट ने भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) को प्रतिभूति नियमन से जुड़े एक अन्य मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की याद दिलाई और दोहराया कि सेबी को ऐसे अवयस्कों के खिलाफ कार्रवाई नहीं करनी चाहिए जिनके नाम का उपयोग करके वयस्कों ने प्रतिभूति का लेनदेन किया हो और जवाबदेही न निभाई हो।

इस मामले में त्रासदी यह है कि सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय सन 2008 में आया था। अदालत ने कहा था कि एक अल्पवयस्क जो कानूनन अनुबंध करने में अक्षम है, उसे प्रतिभूतियों के सार्वजनिक निर्गम से जुड़े प्रतिभूति नियमों के अधीन जवाबदेह नहीं ठहराया जा सकता है। फिर भी करीब एक दशक बाद सन 2017 में सेबी ने एक अवयस्क को अधिग्रहण नियमों के कथित उल्लंघन के मामले में कारण बताओ नोटिस जारी कर दिया। इससे न्यायिक अनुशासन की कमी की बात सामने आती है।

न्यायिक अनुशासन तोड़ने के मामलों में देश की अदालतें उदार रही हैं। न्यायिक फैसलों में निचली अदालतों तथा उन नियामकीय प्राधिकारों की काफी आलोचना की जाती है जो बड़ी अदालतों के फैसलों को न मानते हुए न्यायिक अनुशासन भंग करते हैं। परंतु बहुत कम मौकों पर ऐसा होता है जब ऐसे लोगों के खिलाफ कोई गंभीर कदम उठाया जाता हो। कुछ न्यायाधीश सरकारी एजेंसियों पर जुर्माना आदि लगाते हैं। बहरहाल, नियामकीय अधिकारियों के प्रदर्शन के आकलन के क्रम में न्यायिक नियमों के उल्लंघन को मापने का कोई पैमाना नहीं है। हकीकत में नियामकों के सबसे वरिष्ठ प्रबंधन के प्रदर्शन का आकलन ही नहीं होता।

नियामकीय प्राधिकार की बात करें तो उनमें विधायी, कार्यकारी और अर्द्ध न्यायिक अधिकार शामिल होते हैं। परंतु न्यायिक अनुशासन भंग करने के मामले में वे अव्वल नजर आते हैं। अदालतों द्वारा घोषित कानूनों के बावजूद ऐसे अवसर आते हैं। इसका एक साधारण सा उदाहरण है ऐसे व्यक्ति को रिकॉर्ड की जांच न करने देना जिस पर नियमन के उल्लंघन का आरोप हो। अदालतों ने बारंबार कहा है कि रिकॉर्ड पर प्रस्तुत सामग्री का संपूर्ण अवलोकन उपलब्ध कराया जाना चाहिए, बजाय कि केवल उस सामग्री के जिसका इस्तेमाल आरोप लगाने के लिए किया गया हो।

जब कोई नियामक आप पर कानून उल्लंघन का आरोप लगाता है तो उसे न केवल आपको यह बताना चाहिए कि आपके खिलाफ उसके पास क्या है बल्कि उसे आपको भी तमाम सामग्री तक पहुंच उपलब्ध करानी चाहिए ताकि आप आरोपों को खारिज करने में उनका इस्तेमाल कर सकें। यदि कोई यह दर्शा सकता है कि नियामक के पास उपलब्ध सामग्री से उल्लंघन की बात सही तरीके से स्थापित नहीं होती है तो सच इसी तरह सामने आएगा। इसके बावजूद व्यवहार में देखा जाए तो आज के समय में भी समस्त रिकॉर्ड का स्पष्ट और निष्पक्ष अवलोकन देखने को नहीं मिलता।

मामला दर मामला आधार पर देखें तो उल्लंघन के आरोपित व्यक्ति की घबराहट या आरोप की आक्रामकता के आधार पर न्यायालय यह तय करता है कि अवलोकन प्रक्रिया में रिकॉर्ड पर मौजूद बुनियादी चीजों तक किस हद तक पहुंच सुनिश्चित की जाए। अवलोकन के अनुरोध को सिरे से खारिज करना भी एक सामान्य बात है। इस नियम का एक सटीक उदाहरण है भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग। आयोग ने फाइलों की निगरानी के लिए एक मानक परिचालन प्रक्रिया को संहिताबद्ध किया है। अन्य नियामक मसलन पूंजी बाजार नियामक आदि की बात करें तो वहां अलग-अलग सदस्यों या अधिकारियों का रुख अवलोकन की सुविधा देने के मामले में अलग-अलग रहता है।

जब अदालतों से संपर्क किया जाता है तो नियामक यह कह सकता है कि जांच की सामग्री में ढेर सारी ऐसी है जिसकी प्रकृति गोपनीय है इसलिए उसे साझा नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में अदालत यह निर्देश दे सकती है कि उक्त रिपोर्ट के संवेदनशील हिस्सों के अलावा शेष हिस्सा साझा किया जा सकता है। एक घटना में तो ऐसा भी हुआ कि एक ही जांच रिपोर्ट का दो समांतर प्रक्रियाओं में अवलोकन किया गया। पता यह लगा कि एक प्रक्रिया में दी गई रिपोर्ट में जांच एजेंसी द्वारा चाही गई हर जरूरी सामग्री को गायब कर दिया गया था।

इसी प्रकार बड़ी अदालतों द्वारा कानून के स्पष्ट उल्लेख के बावजूद नीचे स्थित प्राधिकार बार-बार यह दोहराते रहते हैं कि निर्णय के खिलाफ अपील की गई है। सर्वोच्च न्यायालय अक्सर यह कह चुका है कि ऐसा रुख सही नहीं है लेकिन फिर भी किसी पर कोई कार्रवाई न होने से ऐसे निर्णय महज दिखावटी उपदेश बन कर रह जाते हैं। जब कोई बड़ी अदालत कानून निर्धारित करती है और साथ ही उसकी व्याख्या भी करती है, तो समाज को यह दिशा मिलती है कि वह चीजों को ऐसी व्यवस्था में रखे जिससे नियमों का पालन सुनिश्चित हो। इसके बावजूद जब नियामक ही बड़ी अदालतों द्वारा की गई व्याख्याओं का उल्लंघन करते हैं तो समाज के मन में कानून नहीं लेकिन कानून के प्रवर्तकों को लेकर आशंका उत्पन्न होती है।

कारोबारी सुगमता की रैंकिंग कभी भी इस तरह की असहजता के लिए आदर्श नहीं हो सकती। जब शासकीय एजेंसियां कानून का मूल्य समझेंगी केवल तभी कारोबार में वास्तविक निवेश सुनिश्चित हो सकेगा। तब किसी सांख्यिकीय मॉडल द्वारा प्रस्तुत रैंकिंग की जरूरत नहीं रहेगी।

कानाफूसी

मोदी बनाम कमलनाथ

मध्य प्रदेश में झाबुआ विधानसभा उपचुनाव भारतीय जनता पार्टी और प्रदेश में सत्ताधारी कांग्रेस के लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है। इन चुनावों में दोनों दलों ने अपने उम्मीदवार उतार दिए हैं लेकिन ऐसा प्रतीत हो रहा है कि यह चुनाव राष्ट्रीय मुद्दों पर लड़ा जा रहा है। इसे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और मुख्यमंत्री कमलनाथ की लड़ाई के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। प्रचार अभियान में भाजपा जहां सर्जिकल स्ट्राइक, अनुच्छेद 370 और मोदी के अंतरराष्ट्रीय कद को मुद्दा बना रही है, वहीं कांग्रेस सरकार अपने अब तक के प्रदर्शन को केंद्र में रखकर प्रचार कर रही है। कांग्रेस प्रदेश में 114 विधायकों के साथ बहुमत से दूर है। ऐसे में अगर वह यह सीट जीतती है तो उसकी स्थिति मजबूत हो जाएगी। फिलहाल यह सीट भाजपा के पास थी लेकिन विधायक जीएस डामोर के चुनाव जीतकर सांसद बनने के बाद यह रिक्त हो गई।

छवि की चिंता

सोशल मीडिया देश के राजनेताओं की जन संपर्क संबंधी कवायद का अहम हिस्सा बन चुका है। यहां तक कि केवल राजनीतिक दलों के नेता ही नहीं बल्कि सरकारी अधिकारी भी सोशल मीडिया पर सरकार की छवि को लेकर काफी सचेत हो रहे हैं। बहरहाल, लगता है उत्तर प्रदेश प्रशासन चीजों का कुछ ज्यादा ही गंभीरता से ले रहा है। प्रदेश की मौजूदा सरकार के पिछले ढाई वर्ष के कार्यकाल में दो एजेंसियां आईं लेकिन वे सरकार की जरूरतों के साथ तालमेल नहीं बिठा सकीं। सूत्रों का कहना है कि मौजूदा तीसरी एजेंसी को बदलने की चर्चा भी चालू है। बहरहाल तीन साल से भी कम समय में अगर प्रदेश सरकार के सोशल मीडिया को संभालने के लिए एक के बाद एक चार एजेंसियों की जरूरत पड़ जाए तो चर्चा होना तो लाजिमी है।

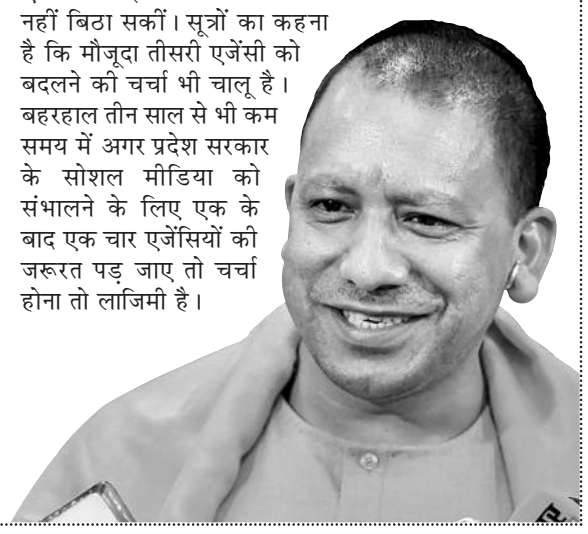

आपका पक्ष

सार्वजनिक स्वास्थ्य काडर बनाया जाए

देश में वर्ष 2002 में राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति पेश की गई और इसके बाद 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) की घोषणा हुई। एनआरएचएम के तहत पिछले एक दशक में उठाए गए कदमों से भारत में पोलियो, टेटनस आदि बीमारियों का उन्मूलन संभव हो सका। इसके अलावा संक्रामक बीमारियों के मामले में भी कमी आई और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र प्रणाली को मजबूत करने पर ध्यान दिया गया। मौजूदा दौर में बीमारियों का तिगुना बोझ भी एक बड़ी चुनौती है। इसमें पहली चुनौती मलेरिया, डेंगू, क्षय-रोग, एचआईवी-एड्स, हेपेटाइटिस जैसी संक्रामक बीमारियों की है। दूसरी चुनौती कैंसर, मधुमेह, हृदय रोग और कुपोषण की बढ़ती मार से जुड़ी है। तीसरे बोझ में वे बीमारियां शामिल हैं जो बढ़ते शहरीकरण और औद्योगीकरण की वजह से अस्तित्व में आई है। स्वास्थ्य सुधार की दिशा में पिछले

साल आयुष्मान भारत योजना शुरू की गई। यह देश के 10 करोड़ परिवारों के 50 करोड़ लोगों को सालाना 5 लाख रुपये तक के मुफ्त इलाज की योजना है। दूसरे वर्ष का मुख्य लक्ष्य अस्पतालों में प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार और इससे संबंधित मान्यता प्राप्ति की एक व्यापक प्रक्रिया को संस्थागत करना रहेगा। राष्ट्रीय

स्वास्थ्य क्षेत्र में सुधार लाने के लिए सरकार को कई कदम उठाने की जरूरत है

स्वास्थ्य प्राधिकरण यानी एनएचए अपने सूचीबद्ध अस्पतालों के लिए प्रमाणीकरण मानकों और डिजिटल गुणवत्ता प्रमाणीकरण जैसी पहल करेगा। इसका आगाज भारतीय गुणवत्ता परिषद द्वारा होगा जिससे सेवाओं की गुणवत्ता सुनिश्चित हो सके। आयुष्मान भारत एक परिवर्तनकारी पहल है जो राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2017 के लक्ष्य को पूरा करने की ओर अग्रसर है। इसमें भी विशेष रूप से प्रधानमंत्री जन आरोग्य का उद्देश्य सरकारी अस्पतालों और सूचीबद्ध निजी सेवा प्रदाताओं के माध्यम से स्वास्थ्य सेवाओं तक सभी की पहुंच सुनिश्चित करना, व्यवस्था सुधारना और लागत को कम करना है। स्वास्थ्य में सुधार के लिए स्वास्थ्य प्रणाली का खाका जिला स्तर से नीचे के स्तर पर तैयार किया जाए। शहरी स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत किया जाए। स्वास्थ्य सेवा की आपूर्ति पक्ष से निपटने के लिए व्यवहार अर्थशास्त्र का उपयोग किया जाए। सार्वजनिक स्वास्थ्य काडर बनाए जाएं।

सूर्यभानु बांधे, रायपुर

पब्जी खेल पर रोक लगाने की जरूरत

आज तकनीकी खेल इतने खतरनाक हो गए हैं कि अगर कोई इन्हें एक बार खेल लेता है तो इससे बाहर निकलना मुश्किल हो जाता है। पब्जी उनमें से एक खेल है। यह भारत में इस कदर बढ़ रहा है कि अगर इस पर रोक नहीं लगाई गई तो यह भविष्य की पीढ़ी को बरबाद कर देगा। यह दिमाग को इस तरह हैक कर रहा है कि खेलने वाला इंसान क्या कर रहा है उसे भी कुछ पता नहीं चलता है। इनमें अधिकतर बच्चे शामिल हैं। बहुत सारे देश में इस खेल पर रोक लगाई गई है। लेकिन भारत में यह बहुत ही खतरनाक रूप ले रहा है। आए दिन मीडिया में इसे लेकर खबर आ रही है। यह मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से नुकसानदेह है। दुखद बात यह है कि इसमें अधिकतर युवा शामिल हैं। इस खेल से समय बरबाद हो रहा है। यह एक हथियार की तरह है जो देश को बरबाद कर सकता है।

श्रीकांत दास, देवघर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।